RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-05
Issue-09
September-2020

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[Peer Reviewed Journal]
DOI: https://doi.org/10.31305/rrijm.2020.v05.i09.034

सद्विचार और सद्व्यवहार का आधार–संस्कार

डॉ० रामानन्द कुमार रमण

M.A. Ph.D, संस्कृत, बी.एन.एम.यू. मधेपुरा, बिहार

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 15 September 2020

Keywords
आप्तकाम, पूर्णकाम, परम निष्काम, अमलात्मा, शुद्धात्मा, योगीन्द्र

***Corresponding Author**
Email: coolsanjeev90[at]gmail.com

ABSTRACT

भारत के ऋषियों–मनीषियों ने अपनी तप साधना के महासागर से शोधकर संसार के अभ्युदय हेतु ज्ञान राशि परिकलित किया। संसार का कल्याण ही जिनका अपना कल्याण था, संसार का सुख ही उनका अपना सुख था, संसार का आनन्द ही उनका अपना आनन्द था। उनके हर साँस से केवल एक ही ध्वनि निकलती थी–

''सर्वे–भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःखभाग भवेत।।''1

यह आर्यावर्त्त वह दिव्य भूमि, देवभूमि, भारत भूमि है, जहाँ धन से अधिक धर्म को, भोग से अधिक योग को तथा सद्विचार और सद्व्यवहार के मूलााधार शुभ संस्कारों को सर्वाधिक महत्त्व दिया जाता है। यह ज्ञान भूमि भारत भूमि है, जहाँ के आप्तकाम, पूर्णकाम, परम निष्काम, अमलात्मा, शुद्धात्मा, योगीन्द्र, मुनीद्र, ऋषियों महर्षियों ने ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' के गीत गाये हैं।

जैसे पर्वत से नदियाँ निकलती है और सूर्य से प्रकाश निकलता है, ठीक उसी प्रकार शुभ संस्कारों से धर्म, अर्थ,काम, मोक्ष, सद्विचार और सद्व्यवहार का प्रादुर्भाव होता है। वेद में सोलह संस्कारों का वर्णन है–इसमें जन्म से पहले तीन, शैशवकाल में छः, शिक्षण काल में पाँच, गृहस्थ संस्कार (विवाह) और मरने के पश्चात् एक। शास्त्रों में भक्ति, मुक्ति, शक्ति,शान्ति सदाचार, सद्विचार, सद्व्यवहार, समता, मानवता, रति और विरति (निर्वेद)–इन सबके स्फुरण और जागरण का मूल कारण शुभ संस्कारों को ही माना है।

दीपक जहाँ जलता है, वहाँ प्रकाश अवश्य होता है, स्रोत जहाँ फूटता है, जलधारा वहाँ से अवश्य बहती है, पुष्प जहाँ खिलता है, सुगंध वहाँ से निश्चय ही प्रसारित होती है। इसी प्रकार मानव–जीवन को उच्च, उदात्त, श्रेष्ठ बनानेवाले शुभ संस्कारों के धारण, पोषण और परिपालन से फलाकांक्षारहित निष्काम कर्मयोग की भावना अवश्य ही सुदृढ़ होती है। साधना,आराधना और उपासना को बल प्राप्त होता है तथा श्रवण, मनन, निदिध्यासन में अनुदिन गति, प्रगति और उन्नति होती है।

मिठाई से मिठास, खटाई से खटास, इक्षुदण्ड (गन्ना) से रस और दूध से घृत निकल जाने पर जैसे ये सभी वस्तुएँ निःसार, तेजहीन, खोखली और चूर–चूर हो जाती है, उसी प्रकार मानव–जीवन से सद्विचार और सद्व्यवहार के आधारभूत शुभ संस्कारों के निकल जाने पर अथवा शिथिल हो जाने पर मानव जीवन में हताशा, निराशा, ओज–तेज विहीनता, किंकर्त्तव्यविमूढ़ता आ जाती है, फिर संस्कारों के लोप होने के दुष्परिणामों की कल्पना अत्यन्त भयदायक है।

स्वस्थ, सशक्त, जागरूक, उन्नतिशील, सामाजिक अथवा आध्यात्मिक जीवन–यापन के लिए सद्विचाार और संस्कार–ये दोनों रथ के दो चक्रों की भाँति अत्यावश्यक और परम उपयोगी माने जाते हैं।

संस्कारों की सुदृढ़ता से ही सशक्त व्यक्तित्व का निर्माण तथा देश, राष्ट्र, समाज–सबका सर्वांगीन कल्याण किया जा सकता है। इसलिए हमारा यह सत्य, सनातन, पुरातन वैदिक धर्म सद्विचार और संस्कार इन दोनों से सम्पुटित होकर ज्ञान और निष्कामकर्म–इन दोनों की समान रूप से शिक्षा देता है।

प्राचीन भारतीय गुरूकुल शिक्षा प्रणाली की यह विशेषता रही है कि गुरूजन अपने शिष्यों को वही शिक्षा देते थे, जो संस्कारों के माध्यम से उनके रग–रग, रोम–रोम, अणु–प्रमाणु में समाहित हो जाए–

''यान्यनवद्यानि कर्माणि। तानि सेवितव्यानि। नो इतराणि।
यान्यस्मांक सुचरितानि। तानि त्वयोपास्यानि। नो इतराणि।।''[2]

सद्गुरू का आचार्य नाम भी सर्वथा अन्वर्थक है। महर्षि आपस्तम्ब ने अपने धर्मसूत्र में आचार्य का लक्षण बतलाया है कि शिष्यगण जिसके संस्कारयुक्त चरित्र से प्रभावित होकर अपने रहन–सहन, आचार–विचार, संयम–साधना, भाषा–भाव और सभ्यता–संस्कृति को संस्कारित कर सकें, उस संस्कार–समन्वित चरित्रवान् विद्वान् को आचार्य कहा जाता है। यथा–

''यस्मात् धर्मान् आचिनोति स आचार्यः।''[3]

श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्री कृष्ण ने कहे है अन्त समय में व्यक्ति जिस संस्कार से संस्कारित होकर शरीर–त्याग

RRIJM 2015, All Rights Reserved

करता है, उस संस्कार के आधार पर ही अगला जन्म होता है–

'' यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।

तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः।।''[4]

योगर्शन में भी संस्कार के बारे में कहा गया है कि संयम द्वारा संस्कारों का साक्षात्कार कर लेने से पूर्वजन्म का ज्ञान होता है। यथा–

''संस्कार साक्षात्करणात् पूर्वजातिज्ञानम।।''[5]

जगद्गुरू के पद पर प्रतिष्ठित इस भारत देश में वेदों से लेकर हनुमान चालीसा तक, पुराणों से लेकर लोकगीतों तक में, जन्म से लेकर जीवन की अंतिम श्वास तक शुभ–संस्कारों के पालन, पोषण और धारण पर बल दिया गया है। वेदान्त–दर्शन में कहा गया है कि स्वाध्याय तथा उपासना आदि शुभ–संस्कारों की आवृति बार–बार मृत्युपर्यन्त करते रहना चाहिए। यथा–

''आवृत्तिरसकृदुपदेशात्।''[6]

महर्षि वेदव्यासजी के अनुसार 'अनावृत्तिःशब्दात्' का सारांश यह है कि जो इन शुभ संस्कारों का आवर्तन दृढ़ता से अपने जीवन में करता रहता है, उसके सभी दुःखों की आमूलचूल निवृत्ति हो जाती है ओर वह परमानन्द–स्वरूप मुक्ति की उपलब्धि करके कृतकृत्य और प्राप्तप्राप्तव्य हो जाता है। उसका फिर संसार में आगमन नहीं होता है।

भारतीय संस्कृति और सनातन धर्म में इन संस्कारों को इतना अधिक महत्त्व दिया गया है कि इन संस्कारों की गरिमा–महिमा, सत्ता–महत्ता उपयोगिता–आवश्यकता को उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करने के लिए जगन्नियन्ता, जगदाधार, सर्वाधिष्ठान, सर्वशक्तिमान, स्वयंप्रकाशमान प्रभू परमात्मा स्वयं कभी मर्यादापुरूषोत्तम श्री राम के रूप में अवतरित होकर और कभी लीलापुरूषोत्तम श्रीकृष्ण के रूप में प्रकट होकर लोगों को शुभ–संस्कारों के धारण और परिपालन की शिक्षा देते हैं। यथा–

''मर्त्यावतारस्त्विह मर्त्यशिक्षणम''[7]

शुभ संस्कारों के प्रभाव से ही वाल्मीकि मार–काट, लूट–पाट को छोड़कर महर्षि बन गये और विभीषण राक्षस से रामदास बन गये। अच्छे संस्कारों के कारण ही शबरी भीलनी से ''भामिनी'' कह कर पुकारी गई और नारद दासपुत्र से देवर्षि बन गये।

इन शुभ संस्कारों से संयम करने से अष्टसिद्धियाँ और नौ निधियाँ साधक की दासी बन जाती है और धर्मादि पुरूषार्थचतुष्ट्य को साधक जब चाहे, जहाँ चाहे, जैसे चाहे प्राप्त कर सकता है। तभी तो सविधि सभी संस्कारों से समन्वित जीवन–यापन करनेवाले हनुमान जी के लिए–

''गरल सुधा रिपु करहिं मिताई।

गोपद सिंधु अनल सितलाई।'' बन गया अर्थात् विष ने अमृत का, शत्रु ने मित्र का, समुद्र ने गोपद् का और अग्नि ने दाहकता छोड़कर शीलतता का रूप धारण कर उनके कार्य में सहयोग किया।

पराशर स्मृति में कहा गया है–

''न श्रीः कुलक्रमाज्जाता भूषणाल्लिखिताऽपि व।

खड्गेनक्राम्य भुज्जीत वीरभोग्या वसुन्धरा।।[8]

ज्ञान संकलिनी तंत्र में परमात्मा को ही वेद कहा गया है। यथा–

'' ने वेदं वेदमित्याहुर्वेदो ब्रह्य सनातनम।

बह्यविद्यारतो यस्तु स विप्रो वेदपारगः।।[9]

अन्त में यह देश धन्य है यह धरती और प्रशस्य है यह भारतीय सभ्यता और संस्कृति, जहाँ व्यष्टि, समष्टि–सबको सुखी, निरामय और भद्र बनाने के लिए सद्विचार और सद्व्यवहार के आधार–शुभ संस्कारों को सर्वाधिक महत्त्व दिया जाता है।

संदर्भ ग्रन्थ–

1. वृहदारण्यकोपनिषद श्लोक सं०–1
2. तैत्तिरीयोपनिषद् शिक्षा बल्ली
3. धर्मसूत्र–1.1.14
4. श्रीमद्भगवद्गीता 8.6
5. योगदर्शन–3.18
6. वेदान्त दर्शन–4.1.1
7. श्रीमद्वा–5.19.5
8. पराशर स्मृति–1.67
9. ज्ञान संकलिनी तंत्र

RRIJM 2015, All Rights Reserved